P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-IV* ISSUE-III*November-2016
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

भूमण्डलीकरण के माध्यम (संचार) में स्त्री की जगह

शैलजा
प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
रूधौली, बस्ती

सारांश

भूमण्डलीकरण के दौर में स्त्री सशक्तीकरण की चर्चा संचार माध्यमों में प्रमुखता से हो रही है। आधी आबादी का जीवन जहाँ चूल्हे–चौके तक सीमित था, वहाँ उसकी दुनिया इन्द्रधनुषीय रंगो में रंग गई है। मीडिया में प्रस्तुत स्त्री की छवि में एक तरफ वह सशक्त नारी है जो शोषण के विरूद्ध आवाज बुलन्द करती है तो दूसरी तरफ से आर्थिक रूप से आत्म निर्भरता के चक्कर में वह पुरूष के हाथ का खिलौना बनती दृष्टिगोचर होती है। विज्ञापनों की दुनिया में समाचार–पत्र, टी0वी0 में उसे जो जगह मिली है वह उस की देह की कीमत पर मिली है। नारी के दैहिक सौन्दर्य को ध्यान में रखकर ही विज्ञापन बनाये जाते हैं, चाहे उसमें उसकी उपस्थिति हो या न हो।

कुल मिलाकर संचार माध्यमों ने स्त्री को एक तरफ उनमुक्त वातावरण में श्वास लेने का साहस दिया है, तो दूसरी तरफ के 'शार्ट कट' का इस्तेमाल कर स्वयं बेवकूफ बन रही है।

अतः विचारणीय पक्ष यह है कि भूमण्डलीकरण के दौर में सशक्त माध्यम संचार में प्रस्तुत स्त्री की यह जगह क्या सही है?

मुख्य शब्द : जनसंचार के माध्यम और स्त्री की छवि

प्रस्तावना

नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत नग–पग तल में
पीयूष स्त्रोत सी बहा करो।
जीवन के सुन्दर समतल में।[1]

जय शंकर प्रसाद जी की ये पंक्तियाँ निश्चित रूप से नारी के सुन्दर और मधुर स्वरूप के साथ उसके प्रति सम्मान की भावना को दर्शाती है। वह श्रद्धा का विषय है। पितृ सत्तात्मक समाज में नारी को श्रद्धा का विषय मान उसकी पूजा करना कोई नई बात नहीं है। वैदिक काल में भी यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता कहकर उसे सर्वोच्च स्थान दिया गया मर्यादा पुरूषोत्तम श्री रामचन्द्र जी ने भी शक्ति की आवश्यकता पड़ने पर शक्तिरूपा नारी की ही आराधना की थी। यह तो रहा उसका पूजित स्वरूपा नारी की ही आराधना की थी। यह तो रहा उसका पूजित स्वरूप किंतु इन सबके साथ ही उसे दुहिता, अबला, एवं भोग्या मान उसका प्रत्येक स्तर पर शोषण भी होता रहा है। इस प्रकार एक तरफ उसकी महत्व प्रतिष्ठा तो दूसरी तरफ उसी पद्दलित करने की प्रक्रिया आदिकाल से अनवरत् चली आ रही है। वैश्वीकरण के इस युग में उसकी स्थिति वैसी ही है। किंतु थोड़े से परिवर्तन के साथ। परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत् नियम है। इसलिए सृष्टि के विकास के साथ उसमें परिवर्तन होना सुनिश्चित है। भूमण्डलीकरण के दौर में स्त्री सशक्तिकरण की चर्चा संसार के संचार माध्यमों में प्रमुखता से हो रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 8 मार्च को अन्तर्राष्ट्रीय महिला–दिवस मनाने की घोषणा के बाद उसी तर्ज पर विश्व के अधिकांश देश महिलाओं को समर्थ, आत्मनिर्भर एवं सशक्त बनाने हेतु उनमें पुरूषों के समान अधिकार दिलाने हेतु प्रयत्नशील है। जिससे चूल्हे–चौके तक सिमटी 'आधी आबादी' जो पूरी आबादी की आधारशिला है की दुनिया इन्द्रधनुषी रंग में रंग गयी। उसकी प्रतिभा खुलकर सामने आ रही है किंतु कुछ विकृतियाँ भी पनप रही हैं। इसे नजरन्दाज नहीं किया जा सकता है। तो बात क्या है? किसी भी विकृति या असमानता को पनपने में, जन्म देने में, उसकी पृष्ठभूमि अवश्य होती है। स्त्री एक तरफ तो स्वेच्छा से अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर रही है तो दूसरी तरफ वह उपभोग की वस्तु बनती जा रही है। शोषण की अति से ही यह असंगति उपजी है। पुरूष–प्रधान समाज की सामन्तवादी सोच ने क्षमा, दया, ममता, करूणा से भरी प्रतिभूति की अपेक्षा कर उसे केवल देह तक सीमित रखा। उसकी देह, उसके रूप–रंग को ही महत्व दिया। साथ ही स्त्री ने भी

स्वयं के शारीरिक सौन्दर्य को 'पुरूष' को उपहार में देने की वस्तु रूप में स्वीकार कर अपने शोषण की मौन स्वीकृति दे डाली। अपने साथ होने वाले पशुवत व्यवहार ने उसके सोचने–समझने की शक्ति को ही समाप्त कर दिया और वह इसे अपनी नियति मान चुप रही। वह शारीरिक रूप से ही नहीं वरन् मानसिक रूप से भी कमजोर होती गयी। 'पुरूष' के बिना उसका कोई अस्तित्व नहीं था। वह 'पुरूषों' के द्वारा थोपी गयी रूढ़ियों को नहीं तोड़ सकती थी। 'पुरूष' के रूप में पिता भाई, और पति के बिना स्त्री का कोई भविष्य नहीं था। उसकी इसी मानसिक पराधीनता ने उसकी दुर्गति कर डाली। वह इसके मानसिक पराधीनता को ही नियति मान स्वयं भी शोषित होती रही और अपनी जाति की हर नई पौध को इसी पराधीनता के रस से सींचा। यही नहीं माँ और सास के रूप में उसके उल्लंघन की कड़ी सजा भी उसने ही सुनाई। ऐसा करते समय वह भूल गई कि जिस पीड़ा को उसने सहा है वही पीड़ा उसकी पीढ़ियों को भी होती होगी।

सच कहा जाय तो पितृसत्तात्मक समाज की सोच को अपनी सोच मान वह कहीं न कहीं स्वयं के ऊपर अत्याचार कर बैठी और ऐसी जंजीर तैयार कर ली जिससे मुक्ति के लिए आज छट्पटाती हुई वह किस दिशा में जा रही है इसका स्वयं उसे अनुमान नहीं है।

उद्देश्य

भूमण्डलीकरण के इस दौर में जहाँ जनसंचार के माध्यमों ने हमारी सुपरिचित स्मृतियां, धार्मिक आस्थायें व जीवन शैली में आमूल–चूल परिवर्तन किया है। वहीं उसने भारतीय स्त्री की छवि को भी प्रभावित किया है। गौर–तलब कि प्रत्येक परिवर्तन के दो पक्ष होते हैं –

सकारात्मक व नकारात्मक। लेख में दोनों ही पक्षों पर प्रकाश डाला गया है तथा बदलते परिवेश में स्त्री की छवि के बदलते स्वरूप का आलोचनात्मक अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा की गई है कि परिवर्तन स्वीकार्य है किन्तु अस्मिता की रक्षा के साथ हो।

भूमण्डली करण का स्त्री पर प्रभाव

भूमण्डलीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा विश्व को राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टियों से एक ही 'स्थान' या एक 'गाँव' के रूप में पाविर्तित किया जा रहा है। ऐसे में एक नए 'सीमा विहीन जगत्' का उदय हो रहा है। वैश्विक संस्कृतियों के आदान–प्रदान से हमारे मनोरंजन, बोध, चयन एवं मानस में परिवर्तन हो रहा है। हमारा अतीत दूर होता जा रहा है। हमारी सुपरिचित स्मृतियाँ, धार्मिक अस्थाएँ, जीवन–शैली परिवर्तित हो रही है। विविधताओं का स्थान 'समरूपता' ले रही है। बढ़ता हुआ समान भोजन, फैशन, पहनावा खेल तथा टी0 वी0 कार्यक्रम में समान रूझान निश्चित रूप से सांस्कृतिक भूमण्डलीकरण की पहचान है।[2] ऐसे में जब संस्कृति का भूमण्डलीकरण हो गया तो इसका प्रभाव भारतीय स्त्री पर भी पड़ना स्वाभाविक ही था।

1975 के लगभग अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष से भारत में 'नारी–आन्दोलन' की विधिवत् शुरूआत हुई और 'आधी–आबादी' को हासिये से केन्द्र में लाने की वीणा प्रबुद्ध, महत्वाकांक्षा से भरी 'विशेष'–वर्ग' की नारियों ने उठाया। पुरूष के दमनकारी प्रवृत्तियों से मुक्ति के लिए नारी ने आर्थिक आत्मनिर्भरता का रास्ता चुना और सर्वाधिकार का ढोल पीटते पुरूषों के प्रत्येक कार्य क्षेत्र में अपनी पैठ जमा ली। पाकशास्त्र से लेकर कला, विज्ञान, साहित्य, राजनीति, सामाजिक गतिविधि, खेल, ज्योतिष, मीडिया, अन्तरिक्ष प्रत्येक क्षेत्र में उसने अपनी विजय पताका लहराई है। यही नहीं पुरूषों द्वारा किये जाने वाले उन सभी कार्यों को अंजाम दे रही है। जिन्हें करना उसके लिए वर्जित माना जाता रहा है। कर्मकाण्डो पर एकाधिपत्य जमाये पुरूषों के नियमों को धन्ता जताते हुए माता–पिता के अन्तिम संस्कार भी किये जा रहे है। डॉ0 आशा रानी रॉय (प्राचार्य कानपुर विद्या मन्दिर डिग्री कालेज) ने केवल पुरोहिती का कार्य करती है। अपितु स्त्रियों के लिए सर्वथा वर्जित शमशान घाट पर अंतिम संस्कार कर और करवा रही है। इस प्रकार के अनेक कारण हमारे सामने है जिनका उल्लेख यहाँ सम्भव नहीं है।

यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि इनमें से अधिकांश महिलाएँ नगरीय जीवन से सम्बन्ध रखती है। सामान्य स्त्री जिसकी कोई महत्वाकांक्षा नहीं है। वह अभी भी रूढ़ियों से बाहर निकलने का साहस नहीं जुटा पा रही है। किन्तु बढ़ते संचार माध्यमों ने नारी के घुटन, दर्द को सरेआम कर गाँवों, कस्बों में रहने वाली स्त्रियों को भी अपने शोषण के प्रति सचेष्ट किया है। कुछ हद तक ही सही किंतु समा जली अवश्य है।

संचार माध्यमों में स्त्री की जगह

जन संचार का सबसे शक्तिशाली, प्रभावशाली माध्यम है – मीडिया। जिसके प्रमुख माध्यम है– 'समाचार–पत्र पत्रिकाएँ टी0 वी0, विज्ञापन और कम्प्यूटर। सम्पूर्ण विश्व के एकीकरण में इन माध्यमों की प्रमुख भूमिका है। जिसके माध्यम से दूसरे देश के भोजन, पहनावे, फैशन, मनोंरजन सब कुछ समान हो गये हैं।

भारत की भी संस्कृति और सभ्यता पर इसका प्रभाव पड़ा है। इन प्रभावों से भारतीय स्त्री भी अछूती नहीं है। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि सहमी– सिमटी स्त्री अब अपने अधिकारों के प्रति सजग है। उसने पुरुष की सत्ता को हिला कर रख दिया है। यह परिवर्तन अचानक नहीं हुआ है इसमें मीडिया की अहम भूमिका है।

एक बात यहाँ दृष्टव्य है कि भूमण्डलीकरण के माध्यमों में स्त्री की क्या जगह है। एक तरफ टी.वी. चैनलों, समाचार–पत्रों, विज्ञापनों और इन्टरनेट पर ब्लागिंग आदि के माध्यम से स्त्री ने अपनी व्यथा – कथा को उजागर कर स्वयं के सशक्त होने की मुहिम छेड़ी है, तो दूसरी तरफ आधुनिकता की अंधी दौड़ में कम समय में सफलता के शिखर पर पहुँचने के लिए शारीरिक वर्णनाओं को तोड़ती हुई तस्वीर भी प्रस्तुत की है। टी.वी. के मनोरंजन चैनलों पर प्रसारित होने वाले धारावाहिकों में मध्यवर्ग की स्त्रियों को जगह मिली है। शोभा कपूर और एकता कपूर द्वारा निर्देशित धारावाहिकों में मध्यवर्ग की स्त्री की सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही चरित्र नित्य देखने को मिलता है जिसकी अत्याधिक चमक–दमक हिन्दी के रीतिकालीन स्त्री की याद ताजा कर देती

है, जो केवल सजावट की वस्तु रही है। इन धारावाहिकों में रोती–धोती स्त्री एक तरफ अन्याय के विरुद्ध लड़ती है तो दूसरी तरफ स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी शत्रु की भूमिका में भी दिखती है। 'क्योंकि सास भी कभी बहू थी' (स्टार टी.वी.), कुमकुम (स्टार टी.वी.), पवित्र रिश्ता (जी.टी. वी.) आदि इस संदर्भ में उल्लेखनीय है।

इन मनोरंजन चैनलों की कड़ी में कुछ ऐसे भी चैनल हैं जो स्त्रियों से सम्बन्धित रूढ़ियों पर प्रहार भी करते हैं जिसने स्त्री की प्रतिभा, उसकी समस्या को बाहर आने से रोक रखा था। 'कलर्स' पर प्रसारित होने वाला धारावाहिक 'बालिका वधु' 'बाल–विवाह' से सम्बन्ध रखता है तो इमैजिन पर कुछ समय पूर्व प्रसारित होने वाला धारावाहिक 'देवी' दुध मुँही बच्ची को देवी के रूप में महिमा–मंडित कर उसके बचपन को छीनने पर प्रहार करता है। जी.टी.वी. पर 'मोहे बिटिया ही कीजौ' में दलित वर्ग की स्त्री का संघर्ष प्रदर्शित किया गया था तो नेशनल पर 'जीना इसी का नाम है' में रूढ़िगत समाज के प्रति एक स्त्री का संघर्ष है। कुल मिलाकर संचार के इस माध्यम ने स्त्री को सशक्त नहीं बनाया है बल्कि उसे उसके अधिकारों के प्रति सचेत किया है। चाहे उसके पीछे निर्माता–निर्देशकों की मंशा व्यावसायिक लाभ ही क्यूं न हो।

अब अगर बात न्यूज चैनलों की करें जहां एक तरफ गाँवों, कस्बों से लेकर महानगरों में रहने वाली महिलाओं के ऊपर आये दिन होने वाले अत्याचारों की पोल खोलकर रख दी है। घर हो या ऑफिस वह कितनी सुरक्षित है, यह अब हमसे छिपा नहीं है। कुछ साल पहले न्यूज चैनलों की श्रृंखला में एक नया नाम जुड़ा – 'फोकस टी.वी.' जिसने नारी को ही केन्द्र बिन्दु बनाकर उसकी उपलब्धियों और समस्याओं को सामने लाने का एक महत्वपूर्ण प्रयास किया है। लेकिन इन सबके साथ मनोरंजन चैनलों पर प्रसारित होने वाले उन्हीं कार्यक्रमों को ब्रेकिंग न्यूज बनाते हैं जिनमें 'स्वयंवर' के नाम पर या फिर 'सौन्दर्य प्रतियोगिताओं' के नाम पर 'स्त्री देह का ही थोड़ा प्रदर्शन' होता है और उसे 'ब्यूटी बिद ब्रेन' का जामा पहना दिया जाता है। और तो और जब कोई समाचार नहीं रह जाता, तब इस समय क्या दिखलाएँ। इसकी समस्या से निपटने के लिये राखी सावंत के चुम्बन को ही ब्रेकिंग न्यूज बनाया जाता है। अपने दर्द को बया करते हुये टेलीविजन के ही पत्रकार बी0बी0 रॉय लिखते हैं – ''आज क्या करें?'' कुछ नहीं है, कुछ नहीं है तो राखी सावंत तो हैं जितनी देर तक राखी चुम्बन का दृश्य प्रसारित करने के लिये तैयार है, उतनी देर तक समस्या क्या है? तब तक आपको किसी चीज की जरूरत क्या है?''[3]

जिस समय इलेक्ट्रानिक मीडिया का विस्तार हुआ उसी समय से समाचार पत्र जगत में भी तेजी आ गई थी। ''अब पत्रकारिता जगत में खबरों का चयन उसकी सामाजिक उपयोगिता के कारण नहीं आर्थिक उपयोगिता के कारण किया जाने लगा। उस खबर की कीमत सर्वाधिक आंकी गयी जो अधिकाधिक लोगों को अपनी ओर आकर्षित करे। ऐसे माहौल में स्त्री के अर्धनग्न, उत्तेजक, मांसल शरीर की तस्वीरों एवं उनसे सम्बन्धित सनसनीखेज खबरों को समाचार–पत्रों में व्यापक 'स्पेस' दिया जाने लगा' ..... अधिकांश राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय अखबारों ने इन रंगीन तस्वीरों और खबरों के लिये अंतिम पृष्ठ आरक्षित कर दिया है। ..... स्त्री शरीर एक प्रोडक्ट के रूप में विकसित हुई।''[4]

राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने अपनी लोकप्रियता का ग्राफ बढ़ाने के लिये स्त्री के नग्न तस्वीर को ही आधार बनाया है –

''एक समय पाठकों के बीच बहुत कम लोकप्रियता वाली ब्रिटिश पत्रिका 'द सन्' के सम्पादक लैरी लैम्ब ने जब युवती स्टीफनी रान की टॉपलेस तस्वीर पेज तीन पर छापने का निर्णय लिया होगा तो उनकी मंशा अपने बॉस स्पर्ट मर्डोक को मुश्किल में डालना नहीं बल्कि पत्रिका को लोकप्रियता दिलाना और उसका प्रसार बढ़ाना था।[5]

संचार माध्यमों में प्रभावशाली भूमिका 'विज्ञापन' की भी है – टी.वी. समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं में प्रसारित एवं प्रकाशित होने वाले विज्ञापन की दुनिया में स्त्री को जो जगह मिली है, वह भी यहाँ उल्लेखनीय है। यहाँ पर उसका आधिपत्य उसके देह के आधार पर ही है। विज्ञापन की दुनिया की नारी 'आई डोन्ट केयर' की नारी है और उसे अपने 'फिगर' और 'फीचर' का ध्यान है। टी. वी. चैनलों, विज्ञापनों में नारी सौन्दर्य को ही केन्द्र में रखा जाता है। चाहे वह कोई प्रोडक्ट हो – साबुन, तेल, माचिस, सिगरेट, पान–मसाला, शराब, फेयरनेस क्रीम, टूथपेस्ट या फिर पुरुषों के अण्डरबियर और बनियान ही क्यूँ न हो ? सब मे नारी देह – दर्शन या फिर उनकी उपस्थिति किसी न किसी रूप में होती ही है।

संचार माध्यमों की नई कड़ी के रूप में इन्टरनेट ने समस्त भूमण्डल को एक कर दिया है। 'इन्टरनेट' विश्व भर में फैले कम्प्यूटरों का एक व्यवस्थित जाल है। इससे उपभोक्ता अपनी मनचाही पुस्तक, इच्छित बाजार, सूचनाएं, मनमाफिक फिल्म, वीडियों को देखने–सुनने के साथ ही ब्लॉगिंग के माध्यम से अपनी बात रख भी सकता है। ब्लॉगिंग की दुनिया में भी पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं का आधिपत्य भी हो रहा है। अमेरिका के आँकड़े बताते हैं कि 'इन्टरनेट की दुनिया से जुड़ी 20 प्रतिशत अमेरिकी महिलाएं जहाँ खुद ब्लॉगर बन चुकी हैं, वहीं पुरुषों की संख्या इनसे बहुत कम 14 प्रतिशत पर ही ठिठक गई है।[6] ये आँकड़े भले ही अमेरिका के हो किन्तु भारत में भी महिलाएं इससे अछूती नहीं है –

रश्मि बंसल का 'यूथसिटी' काफी लोकप्रिय ब्लॉग है। हिन्दी में भी प्रत्यक्षा नीलिमा, आशा आदि महिला ब्लॉगर है, जो अपनी बेबाक टिप्पणियों से अपनी अभिव्यक्ति कर रही हैं।[7] किन्तु इस सबल पक्ष के साथ ही साथ समस्या यह भी है कि 'इन्टरनेट' पर भी सेक्स परोसा जा रहा है, स्त्री की देह–छाया से यह भी मुक्त नहीं है या फिर कहें कि यहाँ भी स्त्री का स्थान देह तक ही सीमित कर दिया गया है। कहीं न कहीं यह माध्यम भी अपसंस्कृति को भी बढ़ावा दे रही है।

कुल मिलाकर संचार माध्यमों ने स्त्री को एक तरफ उन्मुक्त वातावरण में स्वांस लेने का साहस दिया है – जहाँ कल तक वह अपनी देह पर शर्मिन्दा थी वहीं स्टे

फ्री, माला डी, कन्या भ्रूण हत्या जैसे विज्ञापनों के माध्यम से अपने मासिक धर्म, परिवार नियोजन एवं बालिका संरक्षण पर खुली चर्चा कर स्वयं को सहज अनुभव कर रही है, तो दूसरी तरफ वह सफलता के लिए अपने देह का ''शार्टकट'' इस्तेमाल कर स्वयं का बेवकूफ बना रही है।

विचारणीय यह है कि भूमण्डलीकरण के दौर में सशक्त माध्यम संचार में प्रस्तुत स्त्री की यह जगह क्या सही है ? क्या वह सटीक दिशा में है। क्या वह 'पुरुष' के हाथ का खिलौना नहीं बन रही है ? देह से मुक्ति की यात्रा देह पर ही केन्द्रित नहीं हो गई है ?

यहाँ आकर उसे सोचना ही होगा क्योंकि देह की कीमत पर स्वाधीनता सही नहीं है। अपनी समस्याओं और अधिकारों की खुली चर्चा करना तो ठीक है किन्तु सफलता के लिए उसका यह करम आत्मघाती ही है। भले ही उसका वर्चस्व बढ़ा क्यूँ न हो । परिवर्तन हमारी प्रगति के लिए नहीं है, अपसंस्कृति या पुनः शोषण के लिये नहीं है। इस संदर्भ में मन्नू भण्डारी का कथन है – ''परिवर्तन के लिए उठा हुआ कदम – कदम ही हो, ऐसी लम्बी छलांग नहीं कि आदमी औधे मुंह जा गिरे। परिवर्तन की प्रक्रिया कदम–दर–कदम ही बढ़ता है, हाँ कभी–कभी उसमें जरूर कुछ तेजी (बल्कि कभी–कभी तो आँधी भी) आती है, पर उसके मूल होते हैं, अपनी ही सभ्यता–संस्कृति और परिवेश–परिस्थिति तथा अन्य दबाव।'[8]

निष्कर्ष

सारांशताः यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार मनुष्य के भीतर देवता और दानव दोनों का निवास होता है, ठीक उसी प्रकार भूमण्डलीकरण के इस युग में मीडिया ने स्त्री के जिस रूप को जगह दी, उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही पक्ष हमारे समक्ष हैं। एक तरफ तो वह जागरुक है, आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है तो दूसरी तरफ अति जागरूकता एवं अर्थ के चक्कर में अपसंस्कृति की वाहिका बन बैठी है। ऐसे में स्त्री को ही कीमत चुकानी पड़ रही है। यहाँ आकर केवल उसे ही नहीं अपितु समाज के दोनों पक्ष (पुरुष–स्त्री) को सोचने की आवश्यकता है कि परिवर्तन की इस आंधी से कोई विषमता न आने पाये। इसके लिए समाज रूपी रथ के इन दोनों पहियों को एक–दूसरे के साथ एवं विश्वास की आवश्यकता है –

मैं तुमको विश्वास दूँ। तुम मुझको विश्वास दो शंकाओं के सागर हम तर जायेंगे। मरूधरा को मिलकर स्वर्ग बनायेंगे।'[9]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जयशंकर प्रसाद : कामायनी 'श्रृद्धा सर्ग'
2. प्रो0 एस0 एल वर्मा : उच्चतर राजनीति का चंतन, पृ0 487
3. वी0वी0 राव : 'अमर उजाला' 19 अगस्त, 2009, पृ0 4 लेख – 'खबर और मनोरंजन में फर्क कैसे हो'
4. समरेन्द्र सिंह : 'हंस' 'नाच गोरी, नाच मुझे पैसा मिलेगा' (लेख) पृ0 171
5. स्पर्धा : राष्ट्रीय सहारा, 10 जुलाई, 2007, हस्तक्षेप अंक, पृ0 4
6. शिव कुमार तिवारी : हिन्दुस्तान, 8 नवम्बर, 2009 (समाचार–पत्र) 'ब्लॉग की दुनिया में महिलाओं का राज'
7. प्रभा साक्षी : कादम्बिनी, अक्टूबर 2007, 'ब्लॉग हो तो बात बने' पृ0 11–18
8. मन्नू भण्डारी :
9. मैत्रेयी पुष्पा : राष्ट्रीय सहारा (लेख) 'स्त्रियों के गीत'